महानगर टेलीफ़ोन निगम लिमिटेड

बनाम

अध्यक्ष, केंद्रीय कर निदेशक बोर्ड व अन्य

7 मई, 2004

(एस.एन. वरियावा और एच.के. सेमा, जे.जे.)

प्रशासनिक विधिः

अंतर-विभागीय विवाद-एमटीएनएल और सीबीडीटी के बीच विवाद-सी.बी.डी.टी. द्वारा स्वंय को जारी कारण दर्शाओ नोटिस से एम.टी.एन.एल. व्यथित-विवाद उच्च शक्ति समिति को भेजा गया-समिति ने अपील योग्य आदेश की प्रतीक्षा करने का निर्देश दिया-समिति ने उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर करने की अनुमति नहीं दी-उच्च न्यायालय के समक्ष याचिका दायर-अवधारित-कारण दर्शाओ नोटिस के विरूद्ध याचिका को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए-उच्च शक्ति समिति का निर्णय केवल अच्छी तरह से स्थापित स्थिति पर ही जोर दे रहा है-यह एक प्रमुख रूप से निष्पक्ष और सही निर्णय है-निर्णय का उद्देश्य तुच्छ मुकदमेबाजी को रोकना था-अपीलकर्ताओं का कोई अधिकार प्रभावित नहीं हो रहा है-यह स्पष्ट किया गया कि अपीलकर्ता एक अपील योग्य आदेश के विरूद्ध

न्यायालय जा सकते हैं-अनुशासन न बनाए रखने और निर्णय का पालन बाध्यकारी होने से अपीलकर्ताओं ने सार्वजनिक धन और अदालत का समय बर्बाद किया है-चूंकि अपीलकर्ताओं को मंजूरी नहीं दी गई है, अतः ये कार्यवाहियां जारी नहीं रखी जा सकती है। मामले के गुण-दोष से निपटने में उच्च न्यायालय गलत था।

सरकारी विभाग-अंतर-विभागीय विवाद-उच्च शक्ति समिति की स्थापना-उद्देश्य-समिति द्वारा रिट याचिका दायर करने की अनुमति नहीं दी गयी-प्रभाव-सरकार के दो विभागों के बीच या किसी विभाग और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के बीच विवादों को हल करने के लिए उच्च शक्ति समिति के गठन का उद्देश्य न केवल सरकारी विभागों के बीच सुलह करना है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना है कि उच्च शक्ति समिति की मंजूरी के बिना अदालतों के समक्ष तुच्छ विवाद न आएं-यदि ऐसा होता है तो उच्च शक्ति समिति विवाद का समाधान कर सकती है-विवाद का समाधान न होने पर समिति निस्संदेह मंजूरी देगी-यद्यपि, सरकार के किसी विभाग या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम द्वारा तुच्छ मुकदमेबाजी भी हो सकती है-जिसे उच्च शक्ति समिति द्वारा रोका जा सकता है-ऐसे मामलों में समाधान का कोई सवाल ही नहीं है-समिति को विवाद को चलाने की अनुमति से इनकार करना पड़ता है-इस प्रकार के मामलों में विभाग/सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम का अधिकार प्रभावित नहीं होता है।

तुच्छ प्रकृति की मुकदमेबाजी को न्यायालय के समक्ष नहीं लाया जाना चाहिए। भले ही विभाग/सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम को निर्णय अनुचित लगे, अनुशासन के लिए यह आवश्यक है कि वे इसका पालन करें।

तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर, (1995) पूरक 4 एस.सी.सी. 541; मुख्य वन संरक्षक बनाम कलेक्टर, (2003) 3 एस.सी.सी. 472 केनरा बैंक बनाम नेशनल थर्मल पावर कॉर्पोरेशन (2001) 1 एस.सी.सी. 43 तथा सी.सी.ई. बनाम जीसप एंड कंपनी लिमिटेड, (1999) 9 एस.सी.सी. 181 पर भरोसा किया गया।

तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर (1994) 70 ई.एल.टी. 45 एस.सी. को संदर्भित किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 3058/2004

दिल्ली उच्च न्यायालय में सिविल रिट याचिका सं. 228/2000 के निर्णय और आदेश दिनांक 24.08.2000 से

अपीलार्थी की ओर से टी.आर. अंधारुजिना और एस. राजप्पा।

प्रत्यर्थियों की ओर से अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, संजीव सेन और बी.वी. बलराम दास ने भाग लिया।

मंजूरी दी गई।

यह अपील 24 अगस्त, 2000 के फैसले के खिलाफ है।

श्री रोहतगी ने इस न्यायालय द्वारा विशेष अनुमति याचिका पर आगे बढ़ने पर प्रारंभिक आपत्ति उठाई है। उनका कहना है कि इस न्यायालय ने 1995 (4) सप्लीमेंट्री (एससीसी) 541 में रिपोर्ट किए गए तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम कलेक्टर ऑफ सेंट्रल एक्साइज के मामले में माना है कि हर मामले में जहां विवाद सरकारी विभागों और/या एक सरकारी विभाग और एक सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम के बीच है। उस मामले को इस न्यायालय के दिनांक 11 सितंबर, 1991 के आदेश के अनुसार सरकार द्वारा स्थापित उच्चाधिकार प्राप्त समिति को भेजा जाना चाहिए। उन्होंने बताया कि इस न्यायालय द्वारा यह माना गया है कि यह समिति से मंजूरी की मांग करना प्रत्येक न्यायालय या न्यायाधिकरण का कर्तव्य है और मंजूरी के अभाव में कार्यवाही आगे नहीं बढ़ाई जानी चाहिए।

श्री रोहतगी ने सीसीई बनाम जीसोप एंड कंपनी लिमिटेड 1999 (9) एससीसी 181 के मामले पर भी भरोसा किया, जिसमें इस न्यायालय ने दो सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों के खिलाफ केंद्रीय उत्पाद शुल्क के कलेक्टर द्वारा दायर एक अपील का फिर से यह कहते हुए निपटारा कर दिया कि तेल और प्राकृतिक गैस आयोग के मामले (उच्चतम न्यायालय) में बताए गए दिशा-निर्देशों का पालन किया जाना चाहिए। उन्होंने केनरा बैंक बनाम नेशनल थर्मल पावर कॉरपोरेशन 2001(1) एससीसी 43 के इस न्यायालय

के फैसले पर भी भरोसा किया, जिसमें यह माना गया है कि तेल और प्राकृतिक गैस आयोग के मामले (उच्चतम न्यायालय) में निर्देशों का उद्देश्य यह देखना है कि सरकारी विभागों और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के बीच तुच्छ मुकदमेबाजी को इसमें नहीं खींचा जाना चाहिए। उन्होंने 2003(3) एससीसी 472 में रिपोर्ट किए गए मुख्य वन संरक्षक बनाम कलेक्टर के मामले पर भी भरोसा किया, जिसमें यह उल्लेखित है किः-

"14. संविधान की योजना के तहत, अनुच्छेद 131 भारत संघ के दो राज्यों या एक या अधिक राज्यों और भारत संघ के बीच विवाद के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय को मूल क्षेत्राधिकार प्रदान करता है। संविधान निर्माताओं या सी.पी.सी. द्वारा इस पर विचार नहीं किया गया था कि किसी राज्य या भारत संघ के दो विभाग अदालत में मुकदमा लड़ेंगे। किसी राज्य या भारत संघ के दो विभागों के लिए अदालत में मुकदमा लड़ना न तो उचित है और न ही स्वीकार्य है। वास्तव में, ऐसा सार्वजनिक हित के लिए हानिकारक हो सकता है क्योंकि इसमें सार्वजनिक धन और समय की बर्बादी भी शामिल है जिसे टाला जा सकता है। सरकार के विभिन्न विभाग उसके अंग हैं और इसलिए उन्हें समन्वय से काम करना चाहिए न कि टकराव से। उच्च न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार का उपयोग करके एक विभाग द्वारा दूसरे के खिलाफ रिट याचिका दायर करना न केवल औचित्यपूर्ण बल्कि राजतंत्र के खिलाफ है क्योंकि इसमें अनुशासनहीनता

की बू आती है बल्कि यह उस कानून की मूल अवधारणा के भी विपरीत है जिसके लिए मुकदमा करने या होने की आवश्यकता होती है, मुकदमा दायर करने पर या तो प्राकृतिक या न्यायिक व्यक्ति होना चाहिए। भारत के राज्यों/संघ को सरकार के स्तर पर सभी अंतर-विभागीय विवादों को शांत करने के लिए एक तंत्र विकसित करना चाहिए और विवाद के समाधान के लिए ऐसे मामलों को अदालत में नहीं ले जाया जाना चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों और भारत संघ के बीच विवादों के मामले में, यह न्यायालय तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम सीसीई (1992 सप्ली. (2) एससीसी 432) में ऐसे मामलों को संभालने के लिए कैबिनेट सचिव को बुलाया। तेल और प्राकृतिक गैस आयोग और अन्य बनाम सीसीई(1995 सप्ली. (4) एससीसी 541) में इस न्यायालय ने मंत्रालय और मंत्रालय के बीच विवादों की निगरानी के लिए केंद्र सरकार को उद्योग मंत्रालय, सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो और कानून मंत्रालय के प्रतिनिधियों से युक्त एक समिति गठित करने का निर्देश दिया। भारत सरकार, मंत्रालय और भारत सरकार के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम आपस में यह सुनिश्चित करें कि कोई भी मुकदमा समिति द्वारा मामले की जांच किए बिना और मुकदमेबाजी के लिए उसकी मंजूरी के बिना अदालत या न्यायाधिकरण में न आए। सरकार किसी विशिष्ट मामले में संबंधित मंत्रालय के एक प्रतिनिधि और वित्त मंत्रालय के एक प्रतिनिधि को समिति में शामिल कर सकती है। वरिष्ठ अधिकारियों को ही नामांकित किया जाना

चाहिए ताकि समिति रुतबा, नियंत्रण एवं अनुशासन के साथ कार्य कर सके।

15. इस अपील के तथ्य, जो उपर वर्णित है, एक मजबूत मामला बनाते हैं कि राज्य या राज्य के विभिन्न विभागों और किसी के बीच उत्पन्न विवाद को हल करने के लिए राज्य सरकार द्वारा भी इसी तरह की समितियों की स्थापना की आवश्यकता महसूस की गई है। इसके बाबत राज्य सरकारों के लिए एक समिति गठित करना उचित होगा जिसमें राज्य के मुख्य सचिव, संबंधित विभागों के सचिव, कानून सचिव और जहां वित्तीय प्रतिबद्धताएं शामिल हों, वहां वित्त सचिव शामिल हों। ऐसी समिति द्वारा लिया गया निर्णय सभी संबंधित विभागों के लिए बाध्यकारी होगा और सरकार का रुख वही होगा।"

श्री रोहतगी ने बताया कि इस मामले में विवाद को उच्च न्यायालय समिति को भेजा गया था और समिति ने निम्नानुसार निर्णय लिया हैः

> "समिति ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड कारण बताओ नोटिस के खिलाफ रिट याचिका पर विचार कर रहा था, महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड को अपीलीय आदेश का इंतजार करने की सलाह दी। इस स्तर पर समिति ने तदनुसार, उच्च न्यायालय में रिट

याचिका दायर करने की अनुमति नहीं दी।"

उन्होंने बताया कि अपीलकर्ता उच्चाधिकार प्राप्त समिति के निर्णय का पालन करने और अपीलीय आदेश की प्रतीक्षा करने के लिए बाध्य हैं। श्री रोहतगी ने बताया कि 8 मई, 2002 के एक अंतरिम आदेश द्वारा इस न्यायालय ने कारण बताओ नोटिस के अनुसार कार्यवाही को आगे बढ़ने की अनुमति दी है, लेकिन इस न्यायालय ने निर्देश दिया है कि कोई अंतिम आदेश पारित नहीं किया जाएगा। उन्होंने बताया कि इस न्यायालय को अब अंतिम आदेश पारित करने की अनुमति देनी चाहिए और अपीलकर्ता अंतिम आदेश के खिलाफ अपना उपचार कर सकते हैं।

इसके विपरीत, श्री अंध्यारुजिना ने बताया कि सार्वजनिक क्षेत्र निकाय सहित इस देश के प्रत्येक नागरिक को अपनी शिकायतों को अदालत में उठाने का अधिकार है। उन्होंने कहा कि यदि किसी निगम के मौलिक अधिकार प्रभावित होते हैं, भले ही वह सार्वजनिक क्षेत्र का उपक्रम हो, तो निकाय को अदालत में अपने अधिकारों के लिए आंदोलन करने से नहीं रोका जा सकता है। उन्होंने बताया कि तेल और प्राकृतिक गैस आयोग के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय का आदेश केवल यह सुनिश्चित करता है कि सरकारी विभागों और/या सार्वजनिक क्षेत्र निकायों के बीच विवाद पहले उच्चाधिकार प्राप्त समिति द्वारा सुलह के लिए जाएं। उन्होंने कहा कि इरादा यह नहीं था और न ही हो सकता है कि निकाय/विभाग को अपने

अधिकारों को लागू करने के लिए अदालत में जाने से रोका जाए। श्री अंध्यारुजिना ने बताया कि तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर की रिपोर्ट 1994 (70) ईएलटी 45 (एससी) के मामले में इस न्यायालय द्वारा इसे स्पष्ट किया गया है वह इस फैसले के पैरा 4 पर दृढ़ता से भरोसा करते हैं जो इस प्रकार हैः

> "4. इन व्यवस्थाओं को क्रियान्वित करने में कुछ संदेह और समस्याएं उत्पन्न हुई हैं जिन्हें स्पष्ट करने और कुछ कमियों को दूर करने की आवश्यकता है। शब्दों के सटीक आयात और निहितार्थ के बारे में कुछ संदेह बने हुए हैं और मुकदमेबाजी का सहारा लेने से बचना चाहिए यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय का आदेश उस पर प्रभाव नहीं डालेगा --- न ही ऐसा किया जा सकता है --- जहां तक भारत संघ और उसके वैधानिक निगमों का संबंध है, उनके वैधानिक उपचार समाप्त हो गए हैं। वास्तव में, इसका उद्देश्य उच्च स्तरीय समिति का गठन कर उन उपचारों को छीनने के लिए नहीं था। आदेश का प्रासंगिक भाग यह भी है किः
>
> "हम निर्देश देते हैं कि भारत सरकार मंत्रालय और भारत सरकार के मंत्रालय, मंत्रालय और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के बीच विवादों की निगरानी के लिए उद्योग मंत्रालय,

सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो और कानून मंत्रालय के प्रतिनिधियों से युक्त एक समिति का गठन करेगी। भारत सरकार और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम आपस में मिलकर यह सुनिश्चित करेंगे कि समिति द्वारा पहले मामले की जांच किए बिना और मुकदमेबाजी के लिए उसकी मंजूरी के बिना कोई भी मुकदमा अदालत या न्यायाधिकरण में न आए। सरकार विशिष्ट मामले में समिति में संबंधित मंत्रालय के एक प्रतिनिधि को और एक वित्त मंत्रालय से इसमें शामिल कर सकती है। समिति में वरिष्ठ अधिकारियों को ही नामांकित किया जाना चाहिए ताकि समिति प्रास्थिति, नियंत्रण और अनुशासन के साथ कार्य कर सके।"

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जिस मशीनरी पर विचार किया गया है वह केवल यह सुनिश्चित करने के लिए है कि कोई भी मुकदमा पार्टियों को आंतरिक समिति के समक्ष सुलह का अवसर दिए बिना अदालत में न आए।"

श्री अंध्यारुजिना ने बताया कि इस न्यायालय ने इस प्रकार स्पष्ट किया है कि वैधानिक उपायों को ख़त्म नहीं किया जाना है और इसका एकमात्र उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि पक्ष पहले उच्चाधिकार प्राप्त समिति के समक्ष सुलह का प्रयास

करें। उन्होंने प्रस्तुत किया कि यदि उच्चाधिकार प्राप्त समिति विवाद का समाधान नहीं कर सकती है तो उसे न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की अनुमति देनी चाहिए। उन्होंने प्रस्तुत किया कि अन्यथा अदालत में जाने के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम/विभाग के मूल्यवान अधिकार समाप्त हो जाएंगे और पक्षकार उपचारहीन हो जाएंगे।

पक्षकारों को सुना।

निःसंदेह, किसी न्यायालय में किसी अधिकार को लागू करने के अधिकार को ख़त्म नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, यह याद रखना चाहिए कि अदालतें बड़ी संख्या में मामलों के बोझ से दबी हुई हैं। ऐसे अधिकांश मामले सरकारी विभागों और/या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों से संबंधित हैं। जैसा कि मुख्य वन संरक्षक के मामले (सुप्रा) में कहा गया है, संविधान या सीपीसी के निर्माताओं द्वारा इस पर विचार नहीं किया गया था कि भारत के एक राज्य या संघ के दो विभाग और/या सरकार का एक विभाग और एक सार्वजनिक क्षेत्र का उपक्रम एक दूसरे से लड़ें। किसी भी न्यायालय में ऐसा मुकदमा चलना सार्वजनिक हित के लिए हानिकारक है क्योंकि इसमें सार्वजनिक धन और समय की बर्बादी होती है जिसे टाला जा सकता है। ये सभी सरकार के अंग हैं और इन्हें समन्वय से काम करना चाहिए, टकराव से नहीं। इस न्यायालय द्वारा स्थापित तंत्र श्रीमान

अन्ध्यारुजिना द्वारा सुझाए अनुसार नहीं है। क्योंकि श्रीमान् अन्ध्यारुजिना ने केवल सरकारी विभागों के बीच सुलह कराने के लिए इसकी स्थापना यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से की गई कि तुच्छ विवाद उच्चाधिकार प्राप्त समिति की मंजूरी के बिना न्यायालयों के समक्ष न आएं। यदि संभव हुआ तो उच्चाधिकार प्राप्त समिति विवाद का समाधान कर देगी। यदि विवाद नहीं सुलझा तो समिति निस्संदेह मंजूरी दे देगी। हालाँकि सरकार के किसी विभाग या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम द्वारा प्रस्तावित मुकदमेबाजी बनावटी भी हो सकती है। जिसे उच्चाधिकार समिति द्वारा रोका जा सकता है। ऐसे मामलों में विवाद सुलझाने का प्रश्न ना होकर समिति को केवल मुकदमेबाजी की अनुमति देने से इनकार करना चाहिए। ऐसे मामले में विभाग/सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम का कोई अधिकार प्रभावित नहीं होता है। तुच्छ प्रकृति का मुकदमा अदालत में नहीं लाया जाना चाहिए। याद रहे कि लगभग सभी मामलों में कोई न कोई पक्ष उच्चाधिकार प्राप्त समिति के निर्णय से खुश नहीं होगा। असंतुष्ट पक्ष हमेशा यह दावा करेगा कि उसके अधिकार प्रभावित हुए हैं, जबकि वास्तव में, कोई अधिकार प्रभावित नहीं होता है। समिति का गठन सरकार के उच्च पदस्थ अधिकारियों से किया जाता है, जिनकी विवाद में कोई रुचि नहीं होती, इसलिए उम्मीद की जाती है कि उनका निर्णय निष्पक्ष और ईमानदार होगा। भले ही विभाग/सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम को निर्णय अरुचिकर लगे, अनुशासन के लिए आवश्यक है कि वे इसका पालन करें। अन्यथा इस अभ्यास का पूरा

उद्देश्य खत्म हो जाएगा और प्रत्येक पक्ष जिसके खिलाफ निर्णय दिया गया है वह दावा करेगा कि उनके साथ अन्याय हुआ है और उनके अधिकार प्रभावित हुए हैं। इस कारण ऐसा करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

इस मामले में बिल्कुल यही हुआ है. अपीलकर्ता केवल कारण बताओ नोटिस के खिलाफ अदालत का दरवाजा खटखटाना चाहते थे। यह स्थापित कानून है कि कारण बताओ नोटिस के खिलाफ मुकदमेबाजी को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए। यहां ऊपर दिया गया उच्चाधिकार प्राप्त समिति का निर्णय केवल अच्छी तरह से स्थापित स्थिति पर जोर देता है। यह अत्यंत निष्पक्ष एवं सही निर्णय है। इस निर्णय का उद्देश्य निरर्थक मुकदमेबाजी को रोकना था। अपीलकर्ताओं का कोई भी अधिकार प्रभावित नहीं हो रहा है। यह स्पष्ट किया गया है कि अपीलकर्ता अपीलीय आदेश के खिलाफ अदालत जा सकते हैं। अनुशासन बनाए न रखकर और निर्णय का पालन न करके अपीलकर्ताओं ने सार्वजनिक धन और न्यायालयों का समय बर्बाद किया है। स्पष्टीकरण आदेश, जिस पर श्री अंध्यारुजिना ने भरोसा किया, पैरा 5 में स्पष्ट करता है कि यदि समिति द्वारा मंजूरी नहीं दी जाती है तो क्या होगा। यह निर्धारित किया गया है कि मंजूरी के अभाव में कार्यवाही आगे नहीं बढ़ाई जानी चाहिए। इस स्थिति को मुख्य वन संरक्षक मामले (सुप्रा) में और स्पष्ट किया गया है, जहां फिर से इस न्यायालय ने माना है कि ऐसी समिति द्वारा लिया गया निर्णय सभी संबंधित विभागों के

लिए बाध्यकारी है और यह सरकार का रुख है।

इस स्थापित कानून के मद्देनजर, जो हमारे लिए बाध्यकारी है, हम मानते हैं कि चूंकि अपीलकर्ताओं को मंजूरी नहीं दी गई है, इसलिए इस कार्यवाही को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। मामले के गुणावगुण पर निस्तारण करने में उच्च न्यायालय गलत था। इसलिए, हम यह जांच नहीं करते कि उच्च न्यायालय योग्यता के आधार पर सही था या नहीं। तदनुसार, खर्चे के संबंध में बिना किसी आदेश के अपील का निपटारा किया जाता है।

> हम स्पष्ट करते हैं कि प्रतिवादी अब आदेश पारित करने के लिए स्वतंत्र हैं। हालाँकि, गुण-दोष के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी भी अवलोकन/निष्कर्ष का उपयोग या विचार नहीं किया जाएगा। यदि अपीलकर्ता उस आदेश से प्रभावित होते हैं तो वे उस आदेश के विरुद्ध अपना कानूनी उपचार अपनाने के लिए स्वतंत्र होंगे।"

अपील का निपटारा किया गया।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी बृजेश कुमार (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।